प्रतिहि

इस संग्र
से कई
है। 'म
कहानी
के प्रति

इस संग्र
जो सा
शासन
कहती
नरसंहा
का पा
शिखर
के आ
करती
लिखी
इसी में

इस त
भारत
व्यवस्
ढंग से

विकास पेपर बैक्स
मेन रोड, गांधी नगर, दिल्ली-110031

प्रतिहिंसा तथा अन्य कहानियाँ

मुद्राराक्षस

© लेखक

प्रकाशक
विकास पेपरबैक्स
IX/221, मेन रोड, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1992

मूल्य
पचास रुपये

मुद्रक
अजय प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

PRATIHINSÁ TATHA ANYA KAHANIYAN (Hindi)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अपने प्रिय साथी
विलायत जाफ़री को

दुर्घटना

कितना होता होगा पाँच हजार रुपया ? पाँच हजार ! शायद एक बड़ घड़े में भरा जाए तो भी न समाए या फिर उसके लिए बहुत ही बड़े लोहे के सन्दूक की जरूरत होती हो। हरी ने सोचा और उस जंगली पौधे के मुलायम पत्तों का गट्ठा घास की डोरी में बाँध लिया जिसे वह कुकरौंधा कहता था और जिसके बारे में उसका खयाल था कि उसके रस से चोट ठीक हो जाती है।

कितना होता होगा पाँच हजार रुपया ? और अगर वह मिले तो कैसे रखा जा सकेगा ? कहाँ रखा जा सकेगा ?

कुछ बरस पहले किशनचन्द के घर डकैती पड़ी थी। डाकू एक बहुत भारी लोहे का सन्दूक घर से बाहर लुढ़का लाए थे और पूरे एक पहर उसे कुल्हाड़ियों से काटते रहे थे। मगर उसमें बीस हजार के जेवर और रुपये थे। पाँच हजार के लिए उतना बड़ा सन्दूक नहीं चाहिए। उसका चौथाई होगा। लेकिन सन्दूक तो चाहिए और उसमें एक ताला भी चाहिए। ताला हो तो चाभी भी चाहिए।

और सिर्फ यही क्यों, सन्दूक रखने के लिए थोड़ा मजबूत दरवाजा चाहिए। उस दरवाजे पर भी ताला चाहिए। चोर कभी-कभी फूस हटाकर घुस आते हैं। छत भी होनी चाहिए।

वह सब हो सकता है। पाँच हजार रुपये हों तो सन्दूक, दरवाजा और ताला खरीदे जा सकते हैं। खरीदने तो होंगे ही।

मगर यह सब इतना आसान होगा क्या ? ताला लगाने के लिए दरवाजा ऐसा चाहिए जिसमें लोहे का कुंडा और जंजीर लगी हो। तालियाँ बचाकर रखनी होंगी। खो जाएँ तो मुसीबत खड़ी हो सकती है। तालियाँ

रखने के लिए भीतरी जेब लगा हुआ कुर्ता चाहिए।

खासा भारी झंझट है। हरी को अजीब-सी बेचैनी हुई। उस बेचैनी की भाषा बहुत सही नहीं थी, लेकिन वह थी। कुछ संचित करने का यह पहला एहसास उसके लिए बिल्कुल अजनबी और किसी हद तक त्रासद था।

संचय के साथ संतुष्टि और सुख उसके लिए अनजाना था।

जाने कितनी पीढ़ियाँ हरी की गुजरी होंगी। उन लोगों ने यह जाना ही नहीं था कि संचय क्या होता है। खाना पकाने के किसी बर्तन और चूल्हे तक के स्वामित्व को उन्होंने कभी नहीं जाना था। हरी जिस दुनिया का आदमी था उसमें दो बहुत साफ हिस्से हो गए थे, एक हिस्सा उनका जिनके पास अपनी कही जानेवाली चीजें थीं—घर, बर्तन, कपड़े, दरवाजे, कुआँ, खेत, जानवर और दूसरे वे लोग थे जिनकी जरूरतें सिमटकर उनकी खाल के नीचे रह गई थीं। कमर पर बँधा मैल से काला हो चुका अंगोछा भी उनका अपना है यह उन्होंने कभी नहीं जाना था। कुछ संचित करने, कुछ अपना बना सकने की चाह जाने कब मर गई थी और अब उनके यहाँ पैदा होनेवाला हर नया व्यक्ति बिना इस प्रवृत्ति के ही पैदा होना सीख गया था।

थोड़ा-सा बेचैन होकर हरी ने बबूल के उन दरख्तों की तरफ देखा जिनके काँटे प्रेत के दाँतों की तरह तीखे सफेद चमक रहे थे। उनकी पत्तियाँ गायब हो चुकी थीं और भूरे आसमान पर उन पेड़ों की शाखें इस तरह छपी थीं जैसे काले खूनवाली शिराएँ सूखकर वहाँ छप गई हों।

बबूल का पेड़ किस कदर बेडौल होता है। जड़ से लेकर पतली टहनियों तक कहीं किसी अंश में सुघड़ता वहाँ नहीं होती। बेहद खुरदरे, काले और बेडौल तने पर गोंद रिस-रिसकर इस तरह सूख जाता है जैसे घाव सड़ गए हों।

उसने हाथ में थमे पत्तों के बंडल को देखा और घर की ओर अलसाया-सा बढ़ चला।

फर्श पर बहुत सड़े कपड़ों से आधी ढकी छल्ली कराह रही थी। उसके सिर और दोनों कंधों पर अस्पतालवालों ने बहुत उजली पट्टी बाँध दी थी। कूल्हे से लेकर घुटने तक उतना ही सफेद पलस्तर चढ़ा दिया गया था।

जब वह सब ताजा था उस वक्त उसकी सफेदी में एक खास शान और भड़कीलापन था। लेकिन चंद रोज में ही उस सफेद आवरण पर मिट्टी और गन्दगी के भद्दे दाग पड़ चुके थे। कल छल्ली के जख्मों में बहुत दर्द था। उनसे चिपचिपा-सा कुछ बहकर पट्टियों से बाहर झलकने लगा था।

अपनी ज्यादा विश्वसनीय दवा लगाने की गर्ज से हरी ने पट्टियाँ खोल दी थीं। घावों के रिसकर सूखने से पट्टियों की परतें सूख गई थीं।

हरी ने छल्ली की चीखों के बावजूद घाव नीम के पानी से धोकर उसमें कई पत्तों का रस निचोड़ दिया था और पट्टी दुबारा बाँध दी थी। पट्टी बाँधने में जो बेशऊरी हुई थी उसकी वजह से हर दाग अलग-अलग जगह फैल गया था। दागों से भरी उन पट्टियों में पत्तों के रस के गंदे हरे रंग और मिट्टी ने सफेदी चर डाली थी और वे पट्टियाँ किसी हद तक वीभत्स हो उठी थीं।

आज तकलीफ और ज्यादा हो गई थी और छल्ली या तो जल्दी-जल्दी सो जाती थी या बेहोश हो जा रही थी। चिन्तित हरी ज्यादा कारगर दवा कुकरौंधे की तलाश में निकल आया था।

वैसे तो उसे जिन्दगी और मौत दोनों के ही सही अर्थ मालूम नहीं थे बल्कि वह उनसे किसी हद तक असंपृक्त ही था लेकिन छल्ली मर जाय यह कल्पना वह अपने से दूर ही रखना चाहता था। छल्ली बचेगी इसी की उम्मीद उसने ज्यादा कर रखी थी। यह विश्वास और भी दृढ़ इसलिए हो गया था कि जिस तरह की दुर्घटना से बचकर वह यहाँ तक आ सकी थी उससे इस तरह कितने लोग बच पाए थे? चमत्कार ही था कि छल्ली बच गई थी।

वे दोनों उस रात मेला से वापस लौट रहे थे। मेला वे घूमने नहीं काम के लिए गए थे। मेले के इन्तजाम में मजदूरी का बहुत-सा काम निकल आता था।

इस बार मेला कुछ ज्यादा ही सुखद रहा। पहले तो उन्हें दो हलवाइयों का सामान बैलगाड़ी से उतरवाने और उसे सजाने में मदद करने का काम मिला।

हलवाई कुछ सामान तो ताजी मिठाइयाँ तैयार करने के लिए लाया था और कुछ बना-बनाया भी लाया था।

"देखो, कुछ गिरने न पाए। गिरेगा तो मिट्टी लग जाएगी।" हरी सामान उतारते वक्त ज्यादा ही सावधानी दिखाते हुए छल्ली और दूसरे मजदूर को हिदायत देने लगा। सामान उतारने के बाद उसने मिट्टी और ईंटों की मदद से एक भट्ठी भी तैयार की। काम खत्म करके थोड़ी-सी झिकझिक और आजिजी के प्रदर्शन के बाद साढ़े पाँच रुपये मिले और गुड़ की मिठाई भी। और यह काम खत्म करते ही उन्हें उस तमाशेवाले के यहाँ काम मिल गया जो एक छोलदारी के अन्दर बहुत-से टेढ़े-मेढ़े आईने लगा रखता था जिनमें से किसी में आदमी मोटा दिखता था, किसी में पतला। उन शीशों को लगवाते वक्त वह छल्ली की बेढंगी आकृतियों पर बेतरह हँसता रहा था।

उसे सबसे ज्यादा मजा झूलेवाले चर्खे को लगवाने में आया। जरा-सा असावधान होने पर चर्खे का वह सिरा फिर ऊपर जा लटकता था जिस पर सबसे आखिर में झूला लगाने की कोशिश की जा रही थी। एक बार तो उस सिरे से उलझी हुई छल्ली लटककर ऊपर जाते-जाते बची। हरी को बेतहाशा हँसी आती रही थी।

काम खत्म करके उन्होंने गुड़वाली मिठाई खाकर नहर से पानी पिया। हाथ-मुँह धोया और आधे जमे मेले की सैर की। इसके बाद रास्ते के लिए थोड़े से भुने चने खरीदकर पोटली में बाँध लिए।

हरी के जैसे और भी बहुत-से लोग आए होंगे और उनमें से ज्यादातर उसी की तरह रात उतरते घर लौट रहे होंगे क्योंकि मेले की गर्द और गैसबत्ती की रोशनियाँ पीछे छूटते हुए देखने पर हरी को लगा सैकड़ों लोग उसी की तरह धुंध में तैरते चले आ रहे हैं।

इस तरह की भीड़ अजीब होती है। उसमें एक-दूसरे को जोड़नेवाला अर्थवान लगभग कुछ भी नहीं होता। संवाद लायक मुद्दे तो बिल्कुल ही नहीं होते। भेड़ों की निरीह भीड़ की तरह वे यात्रा करते हैं।

भीड़ में एक-दूसरे से अपने को जोड़ने के लिए ही जैसे किसी ने गाना शुरू कर दिया। पतली-तीखी और किसी कदर उदास आवाज में गाया जानेवाला बिदेसिया उनके अपने अकेलेपन को किनारे धकेलकर उनके

साथ इस तरह चलने लगा जैसे वही उनका अपना हो।

रात अभी बहुत बाकी थी। बहुत घने अँधेरे में धुंध की अपारदर्शी झिल्ली हर चीज पर चढ़ गई थी। इतने अँधेरे के बावजूद जमीन से चिपकी रेल की पटरियाँ चमक रही थीं। पटरियों की दो कतारों के बाद शायद और भी होंगी।

दाईं तरफ बिल्कुल बेजान ठंडी मालगाड़ी की ऊँची दीवार थी। वे सब कोई ढाई-तीन सौ थे। पटरियों के आगे स्टेशन पार करने के बाद किनारे-किनारे उन्हें कई मील आगे जाना था। सुबह तक उनमें से ज्यादातर लोग पैदल चलकर भी अपने-अपने गाँव पहुँच सकते थे। लगभग सभी थके हुए थे और ऐसा लग रहा था जैसे फटी मैली चादरों में लिपटे हुए बड़े-बड़े बेडौल पत्थर अँधेरी धुंध को फोड़कर निकल रहे हों और पटरियों पर सरकते जा रहे हों।

हरी ने कंधे पर रखी चने की पोटली बगल में दबा ली और पीछे घूमकर देखा। धुंध और अँधेरे में किसी चेहरे को पहचान पाना सहज नहीं था। लुढ़की आ रही भीड़ में दो पटरियों के बीच तीन आकृतियाँ औरतों की जैसी थीं। उन्हीं में छल्ली भी होगी।

हरी इस उबाऊ एकरस यात्रा को तोड़ने की नजर से सँकरी चिकनी रेल की पटरी पर पाँव साध-साधकर चलने की कोशिश करने लगा।

तभी ट्रेन के इंजन की सीटी सुनाई पड़ी।

"अबे रेलगाड़ी आ रही है रे !" किसी ने आवाज दी।

"यही चिल्ला रही है ससुरी, ये मालगाड़ी।" हरी ने ललकारकर उत्साह से कहा।

"चल खिसक ! अरे खिसक !" मालगाड़ी के साथ-साथ चल रहे कुछ लोग बेजान खड़ी मालगाड़ी को उकसाने का मजा लेने लगे।

सिर्फ एक सीटी की आवाज से उन लोगों की नीरस और उबाऊ यात्रा में एक किस्म की जान पड़ गई।

"अबे धक्का दे धक्का !" किसी ने अँधेरे को चीरकर आगे आते हुए आवाज दी।

जो लोग मालगाड़ी से सटे हुए चल रहे थे वे सचमुच ही उसे धक्का

देने लगे। "लगा दे जोर भैया !"

लोगों ने नारा लगाया—"जोर लगा के हइसा !"

वे लोग अपनी-अपनी पोटलियाँ सँभालकर ट्रेन को धकेलने के लिए जोर लगाने लगे। उनकी ताल पर और लोगों ने भी जोर लगाना शुरू कर दिया।

"धत्तेरे की !" बीच से दो-तीन निराश हुए लोगों ने डिब्बे पर घूँसे पटक दिए।

"अबे अड़ियल है। हूला दे हूला।" किसी ने आवाज देकर अपने डंडे से डिब्बे को पीटा। डिब्बे के लोहे से बड़ी बेहूदा आवाज उभरकर अँधेरे में गूँज गई।

डिब्बे के लोहे से उठी उस आवाज के साथ ही कई लोगों का तीखा चीत्कार उठा।

एक क्षण ठिठककर लोगों ने वह चीत्कार सुना, फिर उन्हें लगा धुंध और अँधेरे में आगेवाले लोगों ने भी शायद मालगाड़ी धकेलने का खेल शुरू कर दिया है। उन्होंने लपककर मालगाड़ी धकेलते हुए फिर नारा लगाया —"ओ भैया जोर लगा के···!"

नारा पूरा नहीं हुआ। पलक झपकते अँधेरे को रौंदकर शोर मचाता हुआ एक काला साया पागलों की तरह चीखता आया और जब तक कोई कुछ समझ पाए पटरी पर खड़े लोगों के चिथड़े उड़ाता हुआ आगे निकल गया।

वह सिर्फ एक इंजन था। उसके पीछे गाड़ी नहीं थी। इंजन चलाने-वाले को दुर्घटना का पता लग गया था लेकिन जोर-जोर से सीटी बजाने के अलावा और कुछ कर पाना उसके बस में नहीं था।

इंजन से सहसा कितने और कौन लोग कुचले यह उस अँधेरे में जल्दी कोई नहीं जान पाया, लेकिन बचे हुए लोगों को भी यह एहसास तुरन्त हो गया कि वहाँ भारी दुर्घटना हो गई है। लगभग एक साथ वे सभी चीखे। लगातार चीखते रहे। तब तक चीखते रहे जब तक उनके गले भर्रा नहीं गए।

स्टेशन वहाँ से थोड़ी दूर था। लोगों का वह चीत्कार स्टेशन पर समझ में किसी को नहीं आया। कई लोगों को लगा मेले से लौटते लोगों का जयकारा है। वे व्यस्त हो गए।

लम्बे अन्तराल के बाद और वह भी टूट-टूटकर दुर्घटना की खबर स्टेशन तक पहुँची। एक सिपाही और लालटेनों के साथ दो खलासी साथ लेकर सहायक स्टेशन मास्टर धुंध को धकियाता हुआ जब वहाँ पहुँचा तो एक क्षण के लिए समझ नहीं पाया कि वह कहाँ पहुँच गया है।

अपने परिचितों के नाम लेकर चीखते रोते लोगों का हुजूम ट्रेन की पटरियों पर जैसे छीना-झपटी-सी कर रहा था। अँधेरे और पटरियों पर टूटती भीड़ में दुर्घटना को समझ पाना आसान नहीं था।

"अरे क्या हुआ भाई?" थोड़ी ऊँची आवाज में पूछता हुआ सहायक स्टेशन मास्टर भीड़ की तरफ बढ़ा। तभी उसका पैर किसी मुलायम-सी चीज पर पड़ा। उसे लगा पैरों के नीचे कोई असाधारण चीज आ गई है। दो कदम आगे निकल जाने के बावजूद वह पीछे घूमा और खलासी से बोला, "देखो तो क्या था यहाँ रे!"

खलासी ने लालटेन नीचे पटरियों की तरफ घुमाई। पटरियों के बीचोबीच पत्थर के टुकड़ों पर किसी बच्चे का कलाई के पास से कटा हुआ हाथ पड़ा था। उसमें खून कहीं नहीं था। लग रहा था जैसे किसी जादूगर ने रहस्यमय जादू से हाथ बनाकर वहाँ डाल दिया हो। लेकिन हाथ के पास ही पटरियों से सटा जो चिथड़ों के ढेर जैसा था उससे छितराया खून बिल्कुल ताजा था। लाश के इतने वीभत्स दृश्य को स्टेशन मास्टर इस तरह घूरता रहा जैसे कुछ पहचानने की कोशिश कर रहा हो। देखते ही देखते उसके चेहरे पर पसीना आया, जबड़ों में तनाव पैदा हुआ और उसे उलटी हो आई। वह किसी बीमार की तरह खड़े-खड़े ही डगमगाने लगा।

सिपाही अपनी टॉर्च इधर-उधर लहराता हुआ ऊँची आवाज में बोला, "यहाँ तो सत्यानास हो गया लगता है।"

उत्तर पाने या स्टेशन मास्टर की हालत जानने के लिए सिपाही रुका नहीं। टॉर्च की रोशनी से धुंध को झाड़ियों की तरह काटता हुआ वह

पटरियों के किनारे-किनारे आगे बढ़ता गया।

पटरियों पर और उसके आसपास आगे और ज्यादा खून फैला हुआ था। परिचितों को खोजते लोगों के पैरों के नीचे लोगों के कटे हुए हिस्से इस तरह बिखरे दिखाई दे रहे थे जैसे किसी ने मशीन से काटकर उन्हें उछाल दिया हो।

टॉर्च की उसी रोशनी में पटरियों के बीचोबीच निश्चेष्ट पड़ी छल्ली को हरी ने पहचाना।

"अरे भैया, अरे ओ!" हरी ने टॉर्चवाले को रोकना चाहा। वह चाहता था रोशनी वहाँ थोड़ी देर और ठहरे और वह देख सके कि छल्ली के साथ क्या कुछ घटा है।

सिपाही को कुछ भी सुनने की इच्छा नहीं थी। वह टॉर्च इधर-उधर फेंकता हुआ सिर्फ आगे बढ़ता चला जा रहा था।

टॉर्च जाने के बाद अँधेरा पहले से भी ज्यादा गहरा हो गया। हरी ने छल्ली को हिलाया। पहले धीरे से फिर जोर से। उसमें हरकत नहीं हुई। हरी के हाथ में कुछ चिकना गीला-सा लिपट गया। अब हरी ने गला फाड़-कर चीखते हुए उसे हिलाया, "अरे छल्ली रे!"

उसके आसपास हर कोई पागलों की तरह चीखे जा रहा था। हरी जानता था कि ऐसी हालत में किसी दूसरे से मदद की कोई अपेक्षा नहीं की जा सकती।

लोगों के शोर और डरावनी चीखों की वजह से उस भारी और ठोस अँधेरे में एक दहशत पैदा हो गई थी। हरी घबराहट में बार-बार छल्ली को हिलाने की कोशिश कर रहा था। रेल के इंजन की एक धुँधली आकृति-सी उसने देखी थी। भाप की इतनी तीखी आवाज न हुई होती तो शायद वह जान भी न पाता कि वहाँ से क्या गुजर गया। उस इंजन से बहुत-से लोग मरे या जख्मी हुए हैं यह उसने अनुमान लगा लिया। छल्ली पटरियों के बीचोबीच पड़ी थी। इंजन से वह कटी नहीं है यह विश्वास करने के लिए उसने अँधेरे में उसके शरीर को टटोला।

पहली बार टटोलने पर वह खासा सन्तुष्ट हुआ कि छल्ली का शरीर सही-सलामत था। जाने क्यों उसने दुबारा अपने को आश्वस्त करना चाहा।

थोड़ी सावधानी से उसने इस बार उसका सारा शरीर टटोला। हाथ अभी घुटने के नीचे पहुँचा ही था कि उसे एक जबर्दस्त धक्का लगा। देर तक वहाँ दुबारा हाथ ले जाने का साहस नहीं हुआ। पिंडली के ऊपर मांस से बाहर एक मोटी नोकदार मेख जैसी लगी हुई थी। मगर वह मेख नहीं थी। टखने की हड्डी टूटकर पेशियों को फाड़ती हुई बाहर निकल आई थी।

हरी ने बौखलाकर नाहक ही इधर-उधर किसी मदद के लिए देखा, फिर खुद ही किसी तरह छल्ली के बेहोश शरीर को उठाकर पटरियों के दूसरी तरफ उतर गया।

टॉर्चवाला सिपाही दुबारा उसी तरफ वापस आया। वापसी में उसने टॉर्च जला जरूर रखी थी लेकिन देख सामने रहा था, नीचे नहीं। वह कुछ इस तरह चल रहा था जैसे बहुत ज्यादा मेहनत करके लौटा हो और पाँव घसीटने की ताकत भी नहीं रह गई हो।

सहायक स्टेशन मास्टर अपने कमरे में आया और किनारे पड़ी बेंच पर लगभग गिरकर चित लेट गया।

"अबे पानी ला जल्दी से।" साथ आए खलासी ने लालटेन मेज पर रखकर दूसरे खलासी से कहा।

दूसरा खलासी पानी लाने भागा। स्टेशन के दो-तीन और कर्मचारी इस बीच वहाँ आ गए, "क्या हो गया बाबू को?"

स्टेशन मास्टर हल्के से खाँसने की कोशिश करने लगा। फिर उसके पेट पर झटका-सा उभरा। वह तेजी से बेंच से लटक गया। उसे फिर उलटी हुई। खलासी पानी ले आया था।

"तबीयत खराब हो गई क्या?" कर्मचारी ने फिर पूछा।

खलासी स्टेशन मास्टर का मुँह धुलाता हुआ बोला, "अरे बाबू, देखते नहीं बनता। छाती फट जाय देखकर। सत्यानाश हो गया है।"

"मगर हुआ क्या?" दूसरे बाबू ने पूछा।

"एक्सीडेंट! एक्सीडेंट!" पहला खलासी स्टेशन मास्टर का कोट उतारने लगा।

"एक्सीडेंट? किस गाड़ी का?"

खलासी ने इस सवाल का जवाब नहीं दिया। वह स्टेशन मास्टर का कोट उतारता रहा।

बाबू खीझ गया, "अबे बताता क्यों नहीं, किस गाड़ी का एक्सीडेंट हुआ है?"

"गाड़ी का क्या, वहाँ खुद देख आओ। कुहराम मचा हुआ है।" दूसरे खलासी ने कहा और फर्श साफ करनेवाले को आवाज देता हुआ बाहर चला गया।

स्टेशन पर खबर जल्दी ही फैल गई। लोग जाने कहाँ-कहाँ से निकलकर दुर्घटनावाली जगह की तरफ दौड़ने लगे।

जिस वक्त वहाँ अस्पताल की मदद पहुँची, दिन चढ़ आया था और कुहरा फूटकर इस तरह ऊपर उठ रहा था जैसे आग लगकर बुझ चुकी हो और सुलगते अंगारों से धुआँ उठ रहा हो।

घायलों और लाशों में से बहुत थोड़ी ही ऐसी थीं जिन्हें समूचा उठाया जा सकता था। शरीर के कटे-बिखरे हिस्सों को समेटना खासा परेशान करनेवाला काम था।

अस्पतालवालों के लाशें उठाने के काम में जुटते ही वहाँ लोगों का चीत्कार फिर सुनाई देने लगा। लाशों से लिपटे हुए लोग एक बार फिर खुलकर रो लेना चाहते थे।

गाड़ियों में इतनी जगह नहीं थी कि घायलों और लाशों के अलावा उनके साथी-सम्बन्धी भी बैठ सकें। गाड़ियाँ रवाना होने के बाद एक बार और ऊँची आवाज में रोकर पुलिस के सिपाहियों के साथ लोगों का काफिला शहर की तरफ चल दिया।

थोड़ी दूर निकल जाने के बाद हरी को कन्धे पर लटकी चने की पोटली याद आई। वह वहाँ नहीं थी। दुर्घटना इतनी अप्रत्याशित थी कि उस बीच चने की पोटली का खयाल ही नहीं आया। वहाँ बेहद अँधेरा भी था। पोटली कहाँ गिरी होगी यह जानना भी मुश्किल ही था। जहाँ पर था वहाँ मालगाड़ी के डिब्बे थे। चने वापस ले आए?

उसे इस खयाल पर थोड़ी-सी शर्मिन्दगी भी महसूस हुई। छल्ली को इस हालत में छोड़कर जाना उसे गलत लगा।

लेकिन थोड़ा चलने के बाद उसने सोचा, चने की वह पोटली खोज लेने में हर्ज नहीं है। आखिर छल्ली अब अस्पताल तो जा ही रही है। वहाँ उसे रहना पड़ सकता है। चने खाने के काम तो आ ही सकते हैं।

हरी पलटकर वापस चल दिया। उसके इस तरह लौटने पर किसी ने कोई ध्यान नहीं दिया।

पूरा स्टेशन पार करने के बाद वह अनुमान से वहाँ आया जहाँ उसके अनुसार मालगाड़ी होनी चाहिए थी। वह वहाँ नहीं थी। जाने कब वह वहाँ से चली गई थी। वह बौखला गया। उस मालगाड़ी के वहाँ न होने से वह समूचा स्टेशन अजनबी हो गया। कुहरा छँट गया था और पटरियों के दूर तक बिछे जाल के आसपास मैली रजाइयों में लिपटे दरख्त मौज में खड़े थे।

गनीमत है कि दुर्घटना की जगह उसे मिल गई। वह स्टेशन के दूसरी तरफ थी। उधर अब जबर्दस्त भीड़ हो गई थी और पुलिसवाले डंडे हिला-हिलाकर लोगों को दूर रखने की कोशिश कर रहे थे। भीड़ में घुसने में उसे परेशानी नहीं हुई। उसने सोचा एक सिरे से खोजना शुरू करेगा। अँगोछे में बँधी पोटली उसने काफी दूर से ही पहचान ली।

भीड़ से निकलकर दो सिपाहियों से कतराता हुआ वह पोटली की तरफ बढ़ा। तभी दो-तीन सिपाही एक साथ चिल्लाए, "एई, किधर जाता है?"

"जी हुजूर!" वह ठिठककर घूमा।

"अबे भाग उधर से!" सिपाहियों ने लाठी हिलाते हुए उसे ललकारा।

"वो···वो···"

हरी ने कहना चाहा कि वह अपनी पोटली उठाने आया है लेकिन सिपाहियों की आक्रामकता से घबराकर वह पीछे हट आया।

अस्पताल से वापस घर तक की उसकी यात्रा काफी सुखद थी। बड़ी-बड़ी मोटरों में अस्पताल से छुट्टी पाए मरीजों के साथ उनके सम्बन्धियों को भी घर लौटने की छूट मिल गई थी। इस यात्रा के लिए उसे पैसे भी नहीं देने पड़े थे।

छल्ली बहुत तकलीफ महसूस कर रही थी, लेकिन वह अब बोल सकती थी। उठकर बैठ सकती थी। सहारे से थोड़ा-सा चल भी सकती थी। हरी ने अस्पताल से मिली गोलियाँ रख दीं और सबसे पहले उसे फिटकरी पिलाई थी। इसके बाद अपनी समूची परम्परा याद करते हुए वे इलाज शुरू कर दिए थे जिनसे जीने की उम्मीद बँधती थी और मर जाने पर नियति याद आया करती थी।

दो रोज छल्ली कुछ ठीक रही फिर उसके जख्मों में बेतरह दर्द शुरू हो गया। बीच-बीच में उसे इतना तेज बुखार आ जाता था कि वह लगभग बेहोश हो जाती थी।

चाहकर भी हरी ने अस्पताल से मिली दवाएँ नहीं दी थीं। उनसे बड़ी गर्मी हो जाती है शरीर में, उसने सुन रखा था। विलायती दवाइयों के लिए गिजा चाहिए। अंगूर, सेब, अनार, सन्तरे और मक्खन तो होना ही चाहिए। इसलिए सबसे अच्छा है तुलसी की पत्ती उबालकर पीते रहो और कुकरौंधे का इस्तेमाल करते जाओ।

जिस दिन गाँव में मुख्यमन्त्रीजी मृतकों के परिवारों से मिलने आए, छल्ली बुखार में बेहोश पड़ी थी वरना वह उसे भी ले जाता। साँवलदास की कलाई टूट गई थी। वह मिलने पहुँचा तो मुख्यमन्त्रीजी ने अपनी माला उसे पहना दी थी। उसके साथ फोटो भी खिंचवाया था। नोहरी भी हरी के साथ उस दुर्घटना में था। उसकी बाएँ हाथ की छोटी उँगली टूट गई थी। उसमें मोटे कपड़े का गट्ठर-सा लपेटे नोहरी ने भी बड़ी खुशी से फोटो खिंचाया था।

छल्ली उसी दिन बहुत ज्यादा बीमार हो गई थी। बहुत देर हरी उसके पास बैठा रहा। उसे धीरे-धीरे आवाजें भी दीं। सिर्फ एक बार बहुत नामालूम ढंग से वह कराही भर थी, बस। हरी बहुत ज्यादा उदास हो गया था। किसी हद तक उसे लगा था शायद वह बचेगी नहीं। गाँव का चौकीदार उसे बुला गया था। उसे भी मुख्यमन्त्री के सामने हाजिर होना था। बहुत बेमन, लगभग टूटा हुआ वह वहाँ पहुँचा तो फोटो खींचने की तैयारी हो रही थी। हरी ने नोहरी को अपनी टूटी उँगली झण्डी की तरह ऊँची करके

विज्ञापित करते देखा। वह हतोत्साहित होकर एक ओर हो गया।

प्रधान ने उसे डाँटकर आगे आने को ललकारा और पास खड़े बड़े हाकिम को बताया कि हरी की बीवी बहुत जख्मी है।

"छल्ली को क्यों नहीं लाया बे ?" किसी दूसरे ने उसे डाँटा।

हरी ने भुनभुनाकर कुछ कहा।

लोग फोटो खिचाने के लिए इकट्ठा होने लगे।

"अबे चल तू ही आ !" प्रधान ने उसे ललकारा।

बहुत हारा हुआ वह भीड़ में शामिल हुआ और फिर लोगों की नजर बचाकर पीछे की तरफ दुबक गया, इस तरह कि फोटो खिचे तो वह दिखाई ही न दे। उसकी इस हरकत पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। इस बात पर वह और ज्यादा उदास हो गया।

वहीं फोटो खिचने के बाद यह घोषणा हुई थी कि सरकार ने मृतकों के परिवार को पाँच-पाँच हजार रुपये नकद देने का फैसला किया है।

मरनेवालों को ! हरी का मुँह एकाएक कड़वा हो गया। उसने देखा अपनी उँगली विज्ञापित करते हुए नोहरी एक सिपाही से पूछने लगा था, "भैया, जिन्हें चोट लगी है उनको सरकार क्या देगी ?"

"धतूरा देगी। किनारे हट !" सिपाही ने घुड़का।

भीड़ से चुपचाप बाहर आकर हरी कुकरौंधे की खोज में चल पड़ा। छल्ली की हालत जल्दी सुधरेगी नहीं। घावों पर कुकरौंधे का रस बार-बार लगाना होगा।

उन बेहद हरे, हल्की-हल्की गंधवाले नरम पत्तों की गड्डी लिए हुए वापस आया तो छल्ली कराह रही थी और करवट बदलने की कोशिश कर रही थी।

"छल्ली, कैसी तबीयत है रे ?" पत्तों की गड्डी जमीन पर रखकर हरी उसके सिरहाने बैठ गया।

जवाब में छल्ली शायद कराही या उसने कुछ कहने की कोशिश की। बेचैनी, दर्द और दुःख हरी के कंठ में बलगम की तरह आ लिपटा। उसने नाहक ही कुछ घूँटा। उसने देखा छल्ली ने करवट बदलने की एक और कोशिश की और सहसा उसका चेहरा राख की तरह सफेद हो गया और

दाँत इस बुरी तरह भिच गए कि आँखों से लेकर गर्दन तक गहरी शिकन पड़ गई। लगा शरीर ऐंठकर टूट जाएगा। देखते-देखते भिंची हुई आँखों की कोरों से आँसू निकलकर कान पर लुढ़क गए।

"छल्ली, बहुत दर्द है ? कहाँ दर्द है ?" हरी ने और झुककर पूछा।

छल्ली कुछ नहीं बोली। हरी ने फिर कहा, "मैं कुकरौंधा ले आया हूँ। दिन में कई बार गर्म-गर्म निचोड़ दूँगा तो जल्दी ठीक हो जाएगी, दर्द भी दबेगा।"

हिम्मत करके उसने छल्ली के कन्धे पर लिपटी पट्टी खोलनी शुरू की। छल्ली सिर्फ दाँत ही भींचती रही, चीखी नहीं। शायद चीखने की शक्ति बची ही नहीं थी। पट्टी का आखिरी सिरा रूई सहित जख्म पर बहुत बुरी तरह चिपक गया था। उसे आहिस्ता-आहिस्ता छुड़ाने की कोशिश में दर्द इतना बढ़ गया कि छल्ली छटपटाने लगी।

हरी रुक गया। थोड़ी देर शायद दर्द थमने का इन्तजार करता रहा, उसके बाद मन मजबूत करके उसने पट्टी खींच ली। पट्टी उखड़ने की ऐसी आवाज हुई जैसे खाल नोचकर खींच ली गई हो। शायद छल्ली को जबर्दस्त पीड़ा हुई होगी क्योंकि वह बिस्तर पर लगभग उछली और छटपटाने लगी। हरी ने धीरे से सहारा देकर उसे सांत्वना देनी चाही। तभी उसने देखा, खुल गए जख्म से तेजी से खून नीचे टपकने लगा। वह घबरा गया। लगभग जड़ित, रक्त के उस घातक प्रवाह को देखता रहा। अनुमान से ही उसने जान लिया कि अगर रक्त बहना रोका नहीं गया तो आखिरी बूँद तक वह बहता ही जाएगा।

छल्ली पर फिर बेहोशी की चादर छा गई। रक्त उसी गति से बहता रहा।

छल्ली अब नहीं बचेगी। खून बहना रुका नहीं तो कोई नहीं बचा सकेगा। छल्ली मर जाएगी। एक उलझन-भरी बेचैनी हरी ने महसूस की— बल्कि उस मृत्यु की कल्पना में एक वीभत्स ग्लानि उसे महसूस हुई। जख्म की ओर उसने हाथ की पट्टी बढ़ाई और फिर जैसे वह बेतरह भयभीत हो गया हो इस तरह काँपता हुआ उठा, घर से बाहर आया और एक तरफ

दौड़ने लगा।

बहुत देर तक और पूरी शक्ति-भर वह दौड़ता रहा। गाँव पीछे छूट गया। खेत निकल गए। फिर उजाड़ मैदान भी पीछे छूट गया।

कँटीली झाड़ियों और बारिश से कटी जमीन की दरारोंवाले इलाके तक पहुँचते-पहुँचते वह थककर लड़खड़ाने लगा। वह तब तक भागता ही रहा जब तक उसके पैरों ने उसका साथ देना एकदम बन्द नहीं कर दिया। सूरज बिल्कुल उतर आया था और रात की धुंध बहुत पहले से ही घुमड़ने लगी थी। अब क्या समय रहते वापस लौटा जा सकेगा? वह जहाँ लड़-खड़ाकर गिरा वहाँ सिरसे की अकड़ी हुई जड़ें इस तरह उभरी दीख रही थीं जैसे किसी मृत्यु की घाटी में बहुत-से साँप सूखकर जम गए हों।

बुरी तरह हाँफते हुए उसने पीछे पलटकर देखा। गाँव बहुत दूर, बहुत पीछे छूट गया था। उसके हाथ में खून लगी पट्टी अभी उलझी थी।

छल्ली?···अब? अब क्या वह कुछ कर पाएगा?···हरी हाथ की मैली पट्टी घूरता रहा। उसे ताज्जुब हुआ कि उसे रोना क्यों नहीं आ रहा। और तभी जैसे उसकी छाती फोड़कर रुलाई उभरी। आसमान पर सूखे रक्त की शिराओं की तरह छपे कंकाल दरख्तों को घूरता हुआ वह जोर-जोर से रोने लगा।

कुश्ती

हर शाम, बिल्कुल इसी समय, पिछली खिड़की पर थोड़ा-सा लटककर खड़ा होना जैसे एक यान्त्रिक क्रिया हो गई है।

पीछे छोटे-से स्टूल पर रखी चाय ठंडी होने में समय लगता है। कभी-कभी उन्हें समय का सही अन्दाज नहीं मिल पाता तब वे जरूरत से कुछ ज्यादा ठंडी हो गई चाय भी डालते हैं, बस थोड़ी गुनगुनी-सी। एक बार दाँत की तकलीफ हो गई थी और ठंडी या गर्म कोई भी चीज असह्य टीस पैदा कर देती थी। तभी से गर्म चाय की आदत छूट गई।

खिड़की से इस वक्त नीचे बहता हुआ पानी बेआब कोलतार की सड़क से गुजरे पुराने टैंकर से बहते चले गए मोबिल ऑयल-सा दिखाई देता है, कहीं चौड़ा, कहीं सँकरा, कहीं बलखाया या फटा हुआ-सा।

पानी के उस बहाव को उन्होंने पसन्द कभी नहीं किया लेकिन उससे पहचान बना ली है। ठीक अपनी पत्नी की तरह। उन्हें नहीं मालूम कि वे उसे प्यार करते हैं या नहीं पर वह उनकी अपनी है।

कुछ लोगों के लिए समझौता कितने स्तरों पर होता है। वे कभी ऐसे मकान में न रहे जो किसी नदी या झील के किनारे हो। उनके प्रभारी अधिकारी रिवरबैंक कालोनी में रहते हैं। जिस नदी के किनारे उनकी कालोनी है, उसी में जाकर मिल गया है यह नाला। इसे नाला ही कहा जाता है क्योंकि यह इतना चौड़ा और गहरा है कि बारिश में एक अच्छी-खासी नदी में तब्दील हो जाता है लेकिन फिर भी यह नाला ही कहा जाता है। क्योंकि बाकी मौसमों में बहुत तीखी तेजाबी गन्धवाले पानी की एक मोटी और बेढंगी लकीर बनी रहती है, बहुत चौड़ाई में फैली, ऊब-डूब करती काली दलदल के ऊपर सूअरों की पाँत की तरह लौटती।